तीर्थंकर तथा वैष्णव प्रतिमाओं के समान लक्षण

—डॉ० भगवतीलाल राजपुरोहित

वैष्णव तथा जैन अपनी आचार-शुद्धता की दृष्टि से परस्पर पर्याप्त निकट हैं। पूजा तथा अर्चन में भी पर्याप्त समता है। इसी प्रकार वैष्णव तथा जिन कलात्मक बिम्बों में भी पर्याप्त समता है।

वैष्णवी प्रतिमा के वक्ष पर श्रीवत्स चिह्न अंकित करने का विधान है। वराहमिहिर के बृहत्संहिता ग्रन्थ में यह विधान किया गया है।

कार्योऽष्टभुजो भगवांश्चतुर्भुजो द्विभुज एव वा विष्णुः।
श्रीवत्साङ्कितवक्षाः कौस्तुभमणिभूषितोरस्कः॥

यही बात मानसार में भी कही गयी है—

सर्ववक्षःस्थले कुर्यात्तदूर्ध्वे श्रीवत्सलांछनम्।

तीर्थंकरों का प्रतिमा-विधान करते हुए वराहमिहिर ने अपने उसी बृहत्संहिता ग्रन्थ में लिखा है कि श्रीवत्स का चिह्न उनकी मूर्ति पर भी होना चाहिए।

आजानुलम्बबाहुः **श्रीवत्सांकः** प्रशान्तमूर्तिश्च।
दिग्वासास्तरुणो रूपवांश्च कार्योऽर्हतां देवः॥

साथ ही उन्हें '**श्रीवत्स**भूषितोरस्कं' भी कहा गया है। समस्त तीर्थंकरों से सम्बन्धित यह सामान्य विशेषता है। फिर भी अपराजितपृच्छा में तीर्थंकरों के भिन्न-भिन्न चिह्न बताते हुए शीतलनाथ का श्रीवत्स चिन्ह बताया गया है। उसी प्रकार श्रेयांसनाथ के साथ बनायी जाने वाली यक्षिणी का नाम भी मानवी अथवा **श्रीवत्सा** है। मानसार के अनुसार सब तीर्थंकरों के हृदय पर सुनहला श्रीवत्सलांछन होना चाहिए।

सर्ववक्षः स्थले हेमवर्ण **श्रीवत्स**लांछनम्।

पार्श्वनाथ का चिह्न सर्प है। उनकी प्रतिमा सर्पछत्र से युक्त बनाई जाती है। पार्श्वनाथ के यक्ष का नाम भी पार्श्व है और वह भी सर्परूप बनाया जाता है।

विष्णु की शेषशायी प्रतिमा में भी शेषनाग का छत्र रहता है। यह पद्मपुराण, अपराजितपृच्छा, विष्णुधर्मोत्तरपुराण इत्यादि ग्रन्थ से स्पष्ट है। आभिचारिक शयन मूर्ति में शिर के समीप दो कुंडली से युक्त समुन्नत दो फणों का होना उत्तम बताया गया है। एक फण मध्यम तथा फणरहित अधम। पार्श्वनाथ तथा विष्णु की प्रतिमाओं में नागछत्र होते हैं। जबकि शिवप्रतिमा में नागभूषण होते हैं, नागछत्र नहीं होते। उज्जयिनी से उपलब्ध शिवप्रतिमा में नागभूषण प्राप्त नहीं होता।

यह संभव है कि प्रतिमा में नागचिह्न नागनृपों के वर्चस्व तथा उनके संरक्षण में उन धर्मों के पल्लवन का प्रतीक हो। असंभव नहीं यदि नागनृपों ने ही नाग (सर्प) प्रतीक चिह्न प्रचलित किये हों, अपनी यादगार को अमिट बनाने के लिए। पर, लगता है उज्जैन पर नागों का वर्चस्व नहीं रहा, विशेषतः परमार-युग में। इसीलिए परमारों ने अपने इष्टदेव शिव की प्रतिमाओं में भी नाग नहीं अंकित करवाया। परमारों और नागों में शत्रुता थी। परमारों ने उन्हें पराजित किया था। यही कारण है कि शैव होते हुए भी उन्होंने नागविनाशक गरुड़ को अपना राजचिह्न बनाया था। गरुड़ नाग का विध्वंसक जो है। गुप्त राजा भी नागविनाशक थे। इसीलिए उनका चिह्न भी गरुड़ था। यद्यपि वे वैष्णव भी थे। परन्तु शुंगों के शासनकाल में एक ओर वैष्णवी गरुड़स्तम्भ भी मिलता है तो नागचिह्नांकित मुद्रा भी मिलती है। पर, वह नागचिह्न अग्निमित्र की रानी धारिणी की अंगुठी पर था जो स्वयं भी धारणसगोत्रा, नागराज-कुमारी थी।

विष्णु की शेषशायी प्रतिमा के नयनयोगनिर्मिलित होते हैं। तथैव तीर्थंकर प्रतिमा भी ध्यानस्थ होती है, विशेषतः बैठी हुई। विष्णु का मुखमंडल अलौकिक शान्ति से संपन्न स्मिति और अण्डाकार से सम्पन्न होता है तथैव तीर्थंकर की प्रतिमा का मुख भी अण्डाकार तथा अमित शान्ति से संपन्न प्रदर्शित होता है। विष्णु के शिर के पीछे प्रभामंडल दिखाया जाता है और बुद्ध तथा जिन की प्रतिमा भी प्रभामंडल संपन्न दिखाई जाती है। शान्ति, सौम्यता तथा ध्यानलीनता बुद्ध एवं शिव की प्रतिमा में भी पाई जाती है।

इस प्रकार प्रतिमाओं के प्रतीकचिह्न उन धर्मों की समानधर्मिता प्रकट करते हैं, भेद में भी अभेद दिखाते हैं। साथ ही यह भी सिद्ध करते हैं कि ये समस्त प्रतीक किन्हीं विशिष्ट परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न मतावलम्बियों ने स्वीकार कर लिये हैं। पर, इस सबसे भारतभूमि के निवासियों की वैचारिक तथा भावात्मक एकता तो व्यक्त होती ही है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org